

भाषा विज्ञान मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की सामान्य विशेषताएं

- 1. प्रमुख ध्वनिया वही है जो मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं में थीं। पंजाबी में उदासीन स्वर 'अ' का प्रयोग हो रहा है।
- 2. 'ऋ' का प्रयोग लेखन में है, उच्चारण में नहीं।
- 3. ऊष्म व्यंजनों में 'ष' ध्वनि का प्रयोग भी केवल लेखन में होता है इसका उच्चारण श. अथवा 'स' के रूप में होता है।
- 4. संयुक्त व्यंजनों ज, त्र, क्ष, श्र, द्य का विकास हिन्दी आदि भाषाओं में हुआ किन्तु इनके उच्चारण सुनिश्चित नहीं हैं।
- 5. अंग्रेजी व्यंजनों के प्रभाव से ऑ ध्वनि का तथा फारसी के प्रभाव से कख, ग, ज, फ ध्वनियों का विकास हुआ।
- 6. द्वित्व व्यंजनों में से एक रह गया और क्षतिपूर्ति के लिए ह्रस्व स्वर दीर्घ हो गया। जैसे -कर्म> कम्म> काम ।
- 7. कुछ आधुनिक आर्य भाषाओं- बंगला, उड़िया, बिहारी, नेपाली में लिंगभेद समाप्त हो गया।
- 8. इसमें एकवचन का प्रयोग मिलता तो है किन्तु सीमित रूप में। प्रायः लोग 'मैं' (एकवचन) के स्थान पर 'हम' का प्रयोग करने लगे हैं।
- 9. आधुनिक आर्य भाषाओं में क्रिया रूपों की बहुलता नहीं है अर्थात् क्रियारूप कम है। सहायक क्रिया रूपों से काम चलाया जाने लगा है।
- 10. रूप रचना की दृष्टि से हिन्दी आदि आधुनिक भाषाएं संस्कृत की तुलना में अधिक हो गईं। संस्कृत में जहां एक शब्द के 24 रूप बनते थे वहां हिन्दी में तीन रूप ही रह कर लड़का लड़के, लड़कों । इन्हीं में कारण चिन्ह लगाकर काम लिया जाने लगा।
- 11. शब्द और धातु रूपों की दृष्टि से आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएं पूर्णरूप से वियोगात्मक हो गईं।

• अपभ्रंश, अवहट्ट और पुरानी हिंदी का सम्बन्ध

• अपभ्रंश और अवहट्ट का योगदान

हिन्दी को अपभ्रंश और अवहट्ट से जो कुछ मिला, उसका पूरा लेखा-जोखा इन तीनों की भाषिक और साहित्यिक सम्पत्ति का तुलनात्मक विवेचन करने से प्राप्त होता है। यहाँ हिंदी के विकास में अपभ्रंश और अवहट्ट के भाषिक अवदान की चर्चा मुख्यतया अभीष्ट है। अन्त में प्रसंगवश और संक्षेप में हम साहित्यिक योगदान की बात उठा सकते हैं।

• भाषिक योगदान (ध्वनिगत)

1. सबसे महत्वपूर्ण योगदान है क्षतिपूरक दीर्घीकरण की प्रक्रिया संस्कृत और प्राकृत के सैकड़ों शब्द हिन्दी का रूप ग्रहण करने लगे। तुलना कीजिए हि० आँसू (संस्कृत अश्रु, प्राकृत अस्सू) आग (सं० अग्नि, प्रा० अग्नि), आज (सं० अद्य, प्रा० अज्ज), आठ (सं० अष्ट, प्रा० अट्ठ), आधा (सं० अर्द्ध, प्रा० अद्ध), ईंट (सं० इष्टका, प्रा० इट्ठअ), ऊँचा (सं० प्रा० उच्च), ऊँट (सं० उष्ट्र, प्रा० उट्ठ), ऊखल (सं० उदखल, प्रा० उक्खल), कान (सं० कर्ण, प्रा० कण्ण, कन्न), काम (सं० कर्म, प्रा० कम्म), खाज (सं० खर्जू, प्रा० खज्जू), गाँठ (सं० ग्रंथि, प्रा० गंति), गीध (सं० गृध्र, प्रा० गिद्ध), छाता सं० छत्रक, प्रा० छत्तअ)
2. दूसरा महत्वपूर्ण योगदान है अन्त्य स्वर का लोप । तुलना कीजिए आग (सं० अग्नि, प्रा० अग्नि), खाज (सं० खर्जू, प्रा० खज्जू), घिन (सं० घृणा), चार (सं० चत्वारि), चौंच (सं० चंचु), तीन (सं० त्रीणि), दाख (सं० द्राक्षा), दूब (सं० दूर्वा), नत्थ या नाथ (सं० नस्ता), नींद (सं० निद्रा), परख (सं० परीक्षा), प्यास (सं० पिपासा), (सं० बुभुक्षा), मूठ (सं० मुष्टि), रात (सं० रात्रि), रीस (सं० ईर्ष्या), ।
3. तीसरा योगदान पंचमाक्षर (इ ञ् ण् न म) के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग; जैसे—अंक (सं० अङ्क), पंच (सं० पञ्च), दंड (सं० दण्ड), बंधन (सं० बन्धन), कंपन (सं० कम्पन)। संस्कृत के पंडितों ने आधुनिक युग के आरम्भ में पंचमाक्षरों का उद्धार करने का प्रयत्न किया और आज तक कई लोग इनका प्रयोग करते हैं, परन्तु सुविधा के नाते अब नियम होता जा रहा है कि अनुस्वार का प्रयोग चलाया जाये।

- 4. संस्कृत के संयुक्त व्यंजनों के सरलीकरण से हिन्दी उच्चारण बहुत सरल हो गया।
तुलना कीजिए—काठ (सं० काष्ठ), सेठ (सं० श्रेष्ठि), आम (सं० आम्र), अचरज (सं० आश्चर्य), अनाज (सं० अन्नाद्य), आँत (सं० आंत्र), उबटन (सं० उद्वर्तन), कसौटी (सं० कर्षपट्टिका), कोठा (सं० कोष्ठक), खेत (सं० क्षेत्र), चौक (सं० चतुष्क) इत्यादि ।
- 5. बहुत-सी महाप्राण ध्वनियों (ख घ थ ध भ) के स्थान पर ह कर देने की प्रवृत्ति प्राकृतों से चलती चलती अपभ्रंश और अवहट्ट के माध्यम से बढ़ती रही। हिन्दी के कुछ नये उदाहरण- अहेर (सं० आखेट), कटहरा (प्रा० कट्ट घर), कहानी (सं० कथानिका), गदहा (सं० गर्दभ), गहरा (सं०ळ गंभीर), गोहूँ या गेहूँ (सं० गोधूम), तिहाई (सं० विभागिका), दूल्हा (सं० दुर्लभ), बहिरा (सं० अधिर), महुआ (सं० मधूक), विछोह (सं० विक्षोभ), सोहन (सं० शोभन)।
- **साहित्यिक योगदान**
- रासो साहित्य के अन्तर्गत 41 ग्रंथ, चरित-काव्य के अन्तर्गत 48 ग्रन्थ, प्रेमाख्यान और खण्डकाव्य के अन्तर्गत 23, रूपक रचनाएँ 12, स्फुट रचनाएँ जिनमें कलक, बारहमासा, फागु विवाहल, दोहा, चउपई, चर्चरी, गीत आदि सम्मिलित हैं। सिद्धों के चर्यापद और नाथों की वाणियाँ अलग हैं। इन सब विधाओं की परम्परा हिन्दी में बराबर चलती रही है, जैसे-पृथ्वीराज रासो, बीसल देव रासो, हमीर रासो आदि में। इनमें कथानक का प्रतिपादन भी उसी ढंग का है। उदाहरण-स्वरूप-संदेश रासक एक खंडकाव्य है जिसमें एक विरहिणी की व्यथा की कथा है। ठीक इसी तरह हिन्दी के बीसलदेव रासो में है। चरित-काव्यों और प्रेमाख्यानों का प्रभाव सूफी साहित्य और हिन्दी के अन्य प्रेमाख्यानों में देखा जा सकता है। कथा नायक का जीवन चरित अतिलौकिक और धार्मिक तत्त्वों से अनुरंजित होता था। दोनों गुणों के काव्यों में नायक-नायिका के प्रेम व्यापारों का चित्रण खुलकर हुआ।

रूप-दर्शन, चित्र दर्शन, पतली-दर्शन या अन्य किसी तरह के रूप सौंदर्य अथवा वस्तु-दर्शन से नायक या नायिका का अपने प्रेमी या प्रेमिका की प्राप्ति के लिए व्याकुल हो जाना, प्राप्ति का उपाय करना, सब कुछ भूलकर उसी का ध्यान करना, वियोग में झुलसना, अनहोनी घटनाओं का घटित हो जाना, एक बार मिलन हो जाने पर भी फिर से बिछुड़ जाना और अन्त में सभी प्रकार की कठिनाइयों और विघ्न-बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सफल होने का वर्णन किया गया है। हिन्दी में यह कुछ प्राप्त होता है। अद्भुत समानता है। चरित-काव्यों में स्वयंभू के पउम चरित को थोड़ा-बहुत प्रभाव रामचरित मानस पर अवश्यपड़ा है। स्वयंभू ने रामकथा को सरोवर कहा है और तुलसी ने रामचरित को मानसरोवर कह दिया। पुण्यदंत ने अपने 'महापुराण' में नटखट कृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है। देखिए सूरदास में । सिद्धों और नार्थों की गीत परम्परा को संतों ने आगे बढ़ाया। सिद्धों के से नैतिक और धार्मिक आचरण सम्बन्धी उपदेश भी संतकाव्य के प्रमुख लक्षण हैं। इस प्रकार हिन्दी साहित्य के इतिहास में चारण काव्य और भक्तिकाल का सूफी काव्य, संतकाव्य, रामभक्ति काव्य गी। दी और कृष्णभक्ति काव्य को प्रेरित करने में अपभ्रंश और अवहट्ट काव्य परम्परा का महत्वपूर्ण सहयोग प्राप्त रहा है । यदि उस पर्ववर्ती काव्य में पाये जाने वाले नये-नये उपमानों, नायिकाओं के नख-शिख वर्णनों, नायकों के सौंदर्य के चित्रण, छंद और अलंकार योजना को गहराई से देखा जाए तो स्पष्ट हो जाएगा कि रीति काल के साहित्य तक उसका प्रभाव जारी रहा। ऐसा लगता है कि सन् 1800 तक थोड़े अदल-बदल के साथ वैसी ही भाषा, वैसे ही काव्यरूप और अभिव्यक्ति के वैसे ही उपकरण काम में लाये जाते रहे। क्रान्ति आई तो खड़ी बोली के उदय के साथ ।

अपभ्रंश और अवहट्ट में दोहा-चौपाई जैसे वर्णिक छंदों का भरपूर प्रयोग हुआ है। हिन्दी के प्रबन्ध काव्यों-सूफियों की रचनाओं में और रामभक्तों के चरित-काव्यों में इन्हीं दो को अधिक अपनाया गया है। अपभ्रंश और अवहट्ट में चउपई 15 मात्राओं का छंद था। हिन्दी के कवियों ने इसमें एक मात्रा बढ़ाकर चौपाई बना लिया छप्पय छंद का रिवाज भी उत्तरवर्ती अपभ्रंश में चल पड़ा था दोहों को हिन्दी के मुक्तक काव्य के लिए अधिक उपयुक्त माना गया। कबीर तुलसी रहीम, बिंद और विशेषतः बिहारी ने इसका अत्यन्त सफल प्रयोग किया। दो भिन्न-भिन्न छंदों के मिश्रण से एक नया छंद बना लेने की प्रवृत्ति भी हिन्दी की उसी परम्परा से प्राप्त हुई कवित ऐसी ही एक विकसित छंद है जिसका रीतिकाल तक बराबर प्रचलन बना रहा। सिद्धों और नाथों की पदरचना से सन्तों और कृष्णभक्त कवियों को प्रेरणा मिली। अलंकार योजना में अपभ्रंश और अवहट्ट के कवियों ने लोक में प्रचलित नये-नये उपमान 'और प्रतीक लेकर एक अलग परम्परा की स्थापना की जिसका हिन्दी के कवियों ने विशेष लाभ उठाया। कबीर जैसे लोकप्रिय कवियों में इस तरह के प्रयोग अधिकता से मिलते हैं। काव्य में चमत्कार लाने और वाग्वैचित्र्य का प्रदर्शन करने की प्रवृत्ति भी हिन्दी को अपभ्रंश और अवहट्ट की परम्परा से मिली।

• हिन्दी का भौगोलिक विस्तार

- हिन्दी उत्तर भारत के बहुसंख्यक लोगों की भाषा है। उत्तर भारत एवं मध्यभारत के दस प्रान्तों में हिन्दी बोली समझी जाती है। इन प्रदेशों को हिन्दी प्रदेश कहा जाता है
- जिसके अन्तर्गत-हिमाचल, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, उ.प्र., उत्तराखण्ड, बिहार, झारखण्ड, म.प्र. तथा छत्तीसगढ़ आते हैं। इस सम्पूर्ण भू-भागको हिन्दी देश या हिन्दी प्रदेश कहते हैं।
- इन सभी राज्यों की भाषा हिन्दी ही है, भलेही उसका क्षेत्रीय भेद (रूप) कुछ अलग हो।
- इस हिन्दी क्षेत्र के अन्तर्गत पांच अन्य भाषाएं बोली जाती हैं जिन्हें हिन्दी की उपभाषाएं कहा जाता है-
- (i) पश्चिमी हिन्दी उपभाषा-इसके अन्तर्गत पांच बोलियां हैं-ब्रजभाषा, कन्नौजी, खड़ी बोली, बुंदेली, हरियाणवी (बागरू)।
- (ii) पूर्वी हिन्दी उपभाषा-जिसके अन्तर्गत तीन बोलियां हैं-अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी।
- (iii) राजस्थानी उपभाषा-इसके अन्तर्गत या बोलियां हैं-मेवाती, मालवी, मारवाड़ी, जयपुरी (ढूढाणी)।
- (iv) बिहारी उपभाषा - इसके अन्तर्गत तीन बोलियां हैं-मैथिली, मगही, भोजपुरी।
- (v) पहाड़ी उपभाषा - इसके अन्तर्गत तीन बोलियां हैं- 1. गढ़वाली, 2. कुमायूनी, 3. नेपाली।
- इस प्रकार हिन्दी के अन्तर्गत पांच उपभाषाएं हैं। कुल 18 बोलियां हैं। सर जार्ज ग्रियर्सन केवल पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी को ही हिन्दी मानते हैं उनके अनुसार- राजस्थानी, बिहारी, पहाड़ी अन्य भाषाएं हैं। शुद्ध भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हिन्दी के अन्तर्गत 23 उपभाषाएं और उनके अन्तर्गत आने वाली बोलिया ही हिन्दी के अन्तर्गत आती हैं।

• विभिन्न बोलियों का क्षेत्र

• पश्चिमी हिन्दी-

- 1. ब्रजभाषा - आगरा, मथुरा, फिरोजाबाद, अलीगढ़, हाथरस, धौलपुर, गुड़गांव, भरतपुर, करौली, बदायूँ, आदि।
मध्यकाल में ब्रज क्षेत्र की बोली ब्रजभाषा बन गई और ब्रज क्षेत्र के बाहर के क्षेत्र भी इस बोली (भाषा) का प्रयोग

- 2. खड़ी बोली-मेरठ, बिजनौर, सहारनपुर, मुरादाबाद, रामपुर आदि जिले आते हैं हिन्दी (मानक हिन्दी) का विकास खड़ी बोली से ही हुआ है। 'ण' का अत्यधिक प्रयोग खड़ी बोली में होता है।
- 3. कन्नौजी - फर्रुखाबाद, कन्नौज, इटावा, शाहजहांपुर, हरदोई, मैनपुरी, आदि जिलों में कन्नौजी बोली जाती है यह ओंकारान्त प्रवृत्ति की बोली है। ब्रजभाषा में जहां ओ की प्रधानता शब्दांत में मिलती है कन्नौजी में ओ की प्रधानता है जैसे-आओ, खाओ, गाओ आदि ।
- 4. बुंदेली - यह बुंदेलखण्ड में बोली जाती है जिसके अन्तर्गत झांसी, महोबा, ग्वालियर, हमीरपुर, भोपाल, ललितपुर जिले आते हैं। ओरछा, सागर, नसिंहपुर में भी बुंदेली बोली जाती हैं।
- 5. हरियाणवी (बांगरू) - इसे बांगर प्रदेश में बोला जाता है जिसके अन्तर्गत हरियाणा प्रदेश के जिले हैं इसकी मुख्य प्रवृत्ति है मूर्धन्य ध्वनियों की अधिकता, न के स्थान पर ण का प्रयोग। जैसे-कौन कौण। व्यंजन द्वित्व भी इसमें बहुत अधिक मिलता है। जैसे- राजा राज्जा, भीतर > भित्तर ।

• पूर्वी हिन्दी की बोलियां-

- 6. अवधी - अवध क्षेत्र के अन्तर्गत-लखनऊ, उन्नाव, रायपुर, रायबरेली, सीतापुर, फैजाबाद, गोंडा, फतेहपुर, बहराइच, लखीमपुर, सुल्तानपुर, बाराबंकी, प्रतापगढ़, जिले आते हैं यहां अवधी बोली का बोलबाला है। 'इया' 'का' प्रत्यय अवधी की पहचान है। यथा-खाट खटिया, चूहा चुहिया, रजिस्टरवा । > भूतकाल में क्रिया के साथ 'इस' लगता है, यथा कहिस, रहिस आदि। अवधी में रामचरितमानस (तुलसी) एवं पद्मावत (जायसी) जैसे महाकाव्य लिखे गए।
- 7. बघेली - यह बघेलखण्ड की बोली है तथा इसका केन्द्र रीवा है। इसके अतिरिक्त यह बोली शहडोल, सतना, मैहर, नागौद क्षेत्र में बोली जाती है।

- 8. छत्तीसगढ़ी-छत्तीसगढ़ प्रान्त की बोली होने से इसका नाम छत्तीसगढ़ी है। यह बिलासपुर, दुर्ग, रायपुर, रायगढ़, राजनंदगांव, कांकेर, सरगुजा, कोरिया में बोली जाती है।
- 9. मेवाती - इसे उत्तरी राजस्थानी भी कहा जाता है। मेवात क्षेत्र में बोलीजाने के कारण इसका नाम 'मेवाती' पड़ा। भरतपुर, करौली जिले में इस बोलीको बोलने वाले 'मेव' लोग रहते हैं।
- 10. मालवी - यह मालवा क्षेत्र की बोली है तथा इन्दौर, उज्जैन, देवास, रतलाम और भोपाल जिलों में बोली जाती है। 11. मारवाड़ी-मारवाड़ी बोली का क्षेत्र राजस्थान का 'मारवाड़' क्षेत्र है जिसके अन्तर्गत जोधपुर, बीकानेर, अजमेर, किशनगढ़, मेवाड़, जैसलमेर क्षेत्र आते हैं।
- 12. जयपुरी - जयपुरी बोली का एक अन्य नाम 'ढूंढाणी' भी है। यह बोली जयपुर, अजमेर क्षेत्र में बोली जाती है।
- 13. मैथिली- यह बिहारी उपभाषा वर्ग की बोली है और बिहार के मिथिला क्षेत्र में बोली जाती है। इस बोली का क्षेत्र, दरभंगा, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, मुंगेर जिलों में व्याप्त है।
- 14. मगही - यह बोली बिहार के पटना, गया, पलामू, हजारीबाग, मुंगेर, भागलपुर में बोली जाती है।
- 15. भोजपुरी - बिहार के भोजपुर क्षेत्र में बोली जाने वाली यह बोली पूर्वी उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्र में भी बोली जाती है। इस बोली का क्षेत्र वाराणसी, जौनपुर, गाजीपुर, बलिया, गोरखपुर, देवरिया, आजमगढ़, बस्ती, शाहाबाद, चम्पारण, सारण जिले हैं।
- 16. नेपाली - इस बोली को पश्चिमी पहाड़ी भी कहा जाता है। यह बोली हिमाचल प्रदेश के शिमला, मण्डी, चम्बा, जौनसार, सिरमौर क्षेत्र में बोली जाती है।
- 17. गढ़वाली - यह गढ़वाल क्षेत्र की बोली है और उत्तरकाशी, बट्टीनाथ, श्रीनगर (गढ़वाल) में बोली जाती है।
- 18. कुमायूनी- - उत्तराखण्ड का कुमायूँ क्षेत्र इस बोली का क्षेत्र है। नैनीताल, अल्मोड़ा, हल्द्वानी, रानीखेत में यह बोली जाती है।

सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से केवल पश्चिमी हिन्दी और पूर्वी हिन्दी को ही हिन्दी के अन्तर्गत माना है। इस दृष्टि से हिन्दी के अन्तर्गत केवल आठ बोलियाँ - ब्रजभाषा, कन्नौजी, बुन्देली, बांगरू, खड़ी बोली, अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी को ही माना जा सकता है। खड़ी बोली का एक अन्य नाम कौरवी भी है। यदि हिन्दी का मानक या परिनिष्ठित अर्थ ग्रहण करें तो केवल 'खड़ी बोली' पर आधारित हिन्दी ही मूल हिन्दी है। यही हिन्दी हमारी राजभाषा है तथा यही शिक्षा का माध्यम है। यही रेडियो-टीवी के हिन्दी कार्यक्रमों की भाषा है और हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएँ एवं पुस्तकें इसी हिन्दी का प्रयोग करती हैं। वस्तुतः मानक हिन्दी का तात्पर्य खड़ी बोली हिन्दी के उस रूप से लिया जाता है जो हिन्दी क्षेत्र के नगरों की भाषा है।

खड़ी बोली- (कौरवी) -:दिल्ली एवं. मेरठ के आसपास के क्षेत्रों में बोली जाने वाली लोक बोली खड़ी बोली कहलायी। यह क्षेत्र पुराना कुरु जनपद है। इस आधार पर राहुल सांकृत्यायन इस बोली को 'कौरवी' नाम दिया । खड़ी बोली का विकास शौरसेनी अपभ्रंश के उत्तरी रूप से हुआ। खड़ी का अर्थ है - खरी, शुद्ध, स्थिर या परिनिष्ठित। कामताप्रसाद गुरुने खड़ी का अर्थ कर्कश लगाया । गिल क्राइस्ट ने इसका अर्थ मानक या परिनिष्ठित बताया। अब्दुल हक ने इसका आशय गंवारू बताया। पं० किशोरीदास वाजपेयी का मतव्य है कि आकारान्तता की खड़ी पाई के कारण इसका नाम खड़ी बोली पड़ा। खड़ी बोली को standard या परिनिष्ठित या टकसाली हिन्दी भी कहा जाता है। कुछ लोग साहित्यिक हिन्दी, उच्च हिन्दी आदि नाम भी देते हैं। ठेठ हिन्दी, शुद्ध हिन्दी आदि भी कह दिया जाता है। समस्त भारत में सम्पर्क भाषा का रूप खड़ी बोली है। समूचे ज्ञान-विज्ञान, काव्यशास्त्र, शिक्षा, प्रशासन, व्यवसाय, प्रौद्योगिकी आदि की भाषा खड़ी बोली है। खड़ी बोली अपने मूल रूप में रामपुर, मुरादाबाद, मेरठ, बिजनौर, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, देहरादून के मैदानी भाग, अम्बाला, दिल्ली, पटियाला आदि के पूर्वी भागों में बोली जाती है। - इस दौरेवी बोली को खड़ी बोली नाम 1803 ई० में प्राप्त हुआ। खड़ी बोली का सर्वप्रथम प्रयोग लल्लूलाल व सदल मिश्र के 'लेखों में मिलता है। मुसलमानों ने इसे रेख्ता कहा है। इसे हिन्दुस्तानी, सरहिन्दी और वोल्चाल की हिन्दुस्तानी भी कहते हैं। यह आकारान्त प्रधान भाषा है जैसे - करता, खाता, बड़ा छोटा आदि।

